E-learning material prepared by by Dr.Abha Jha

सांख्य दर्शन मे विकासवाद

डॉ आभा झा
सहायक प्राध्यापिका एवं विभागाध्यक्ष, स्नातकोत्तर दर्शनशास्त्र विभाग
डॉ श्यामा प्रसाद मुखर्जी यूनिवर्सिटी ,रांची

सांख्य दर्शन का विकासवाद सृष्टि के विकास का सिद्धांत है | सांख्य दर्शन का यह मानना है कि संसार की उत्पत्ति विकास के द्वारा होती है|इसके विकासवाद की पृष्ठभूमि में इसका सत्कार्यवाद का सिद्धांत है जिसके अनुसार कार्य उत्पत्ति के पूर्व अपने कारण में अव्यक्त रूप में विद्यमान रहता है| यह विकास पुरुष और प्रकृति के संयोग का फल है | संसार का विकास प्रकृति के द्वारा होता है |यह सृष्टि प्रकृति का परिणाम है| अकेली प्रकृति सृष्टि नहीं कर सकती क्योंकि सांख्य दर्शन के अनुसार प्रकृति जड़ है। अतः सृष्टि E-learning material prepared by by Dr.Abha Jha

सांख्य दर्शन मे विकासवाद

डॉ आभा झा
सहायक प्राध्यापिका एवं विभागाध्यक्ष, स्नातकोत्तर दर्शनशास्त्र विभाग
डॉ श्यामा प्रसाद मुखर्जी यूनिवर्सिटी ,रांची

सांख्य दर्शन का विकासवाद सृष्टि के विकास का सिद्धांत है | सांख्य दर्शन का यह मानना है कि संसार की उत्पत्ति विकास के द्वारा होती है|इसके विकासवाद की पृष्ठभूमि में इसका सत्कार्यवाद का सिद्धांत है जिसके अनुसार कार्य उत्पत्ति के पूर्व अपने कारण में अव्यक्त रूप में विद्यमान

रहता है| यह विकास पुरुष और प्रकृति के संयोग का फल है | संसार का विकास प्रकृति के द्वारा होता है |यह सृष्टि प्रकृति का परिणाम है| अकेली प्रकृति सृष्टि नहीं कर सकती क्योंकि सांख्य दर्शन के अनुसार प्रकृति जड़ है। अतः सृष्टि के लिए प्रकृति और पुरुष दोनों का संसर्ग आवश्यक है| प्रकृति और पुरुष विरुद्ध धर्म वाले हैं |प्रकृति और पुरुष के सहयोग को समझाने के लिए सांख्य दर्शनमें अंधे और लंगड़े का उदाहरण दिया गया है| जंगल पार करने के लिए अंधा और लंगड़ा परस्पर सहयोग करते हैं और दोनों अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेते हैं| इसी प्रकार निष्क्रिय पुरुष और अचेतन प्रकृति लक्ष्य की प्राप्ति के लिए परस्पर सहयोग करते हैं। सृष्टि से पूर्व प्रकृति गुणों की साम्यावस्था में रहती है |इसे प्रलय की स्थिति कहा गया है |इस स्थिति में सारी सृष्टि कारण रूप में विद्यमान रहती है तथा सृष्टि की अवस्था में यह कार्य रूप में व्यक्त होती है |इस प्रकार सांख्य दर्शन के अनुसार संपूर्ण सृष्टि प्रकृति के गर्भ में प्रकट होने से पूर्व अव्यक्त रूप में विद्यमान है|पुरुष के संयोग से गुणों की साम्यावस्था भंग होती है तथा सृष्टि की क्रिया प्रारंभ हो जाती है |सृष्टि का विकास सीधी रेखा में नहीं चलता| सृष्टि और प्रलय चक्रवत चलते रहते हैं, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार एक व्यक्ति का जन्म मरण चक्र चलता रहता है| सृष्टि अनादि है|

प्रश्न है कि सृष्टि क्यों और कैसे होती है? सांख्य का कहना है कि प्रकृति अचेतन और अंध है किंतु वह सक्रिय है और द्रष्टा है, जबकि पुरुष चेतन और निष्क्रिय है| पुरुष को प्रकृति की अपेक्षा है| वह भोग करना चाहता है और उसके पश्चात उससे निवृत्त होकर अपने स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करके मोक्ष प्राप्त करता है| इसी प्रकार प्रकृति को पुरुष की अपेक्षा है| प्रकृति चाहती है कि पुरुष उसे देखे , उसका भोग करे, उसके स्वरूप को जाने | इस प्रकार प्रकृति पुरुष के भोग तथा मोक्ष के लिए सृष्टि कार्य में प्रवृत्त होती है|

सृष्टि का विकास :-

सांख्य दर्शन के अनुसार सम्पूर्ण सृष्टि उत्पति एवं विकास के पूर्व एक मूल कारण में विद्यमान रहती है | सृष्टि के पूर्व प्रकृति के सभी गुण साम्यावस्था में रहते हैं |गुणों की सम्मिलित मात्रा न घट सकती है न बढ़ सकती है | यहाँ हमें आधुनिक उर्जा संरक्षण के सिद्धांत का संकेत मिलता है| उत्पत्ति नयी सृष्टि नहीं है बल्कि अविर्भाव मात्र है| प्रकृति और पुरुष का सानिध्य होने पर गुणों की साम्यावस्था में विकार उत्पन्न होता है| इसे गुण क्षोभ कहा गया है |इस अवस्था में उथल-पुथल मचती है | प्रकृति के तीनों गुण आपस में आपस में मिलते हैं तथा उनके संयोग से सांसारिक विषय उत्पन्न होते हैं|

प्रकृति से सृष्टि के विकास की प्रक्रिया का क्रम इस प्रकार है ;

महत् - सृष्टि के विकास के क्रम में सर्वप्रथम बुद्धि या महत् तत्त्व उत्पन्न होता है| विराट बाह्य जगत इसमें बीज रूप में निहित है | इसलिए इसे महत कहा गया है| व्यष्टि रूप में यह प्रत्येक व्यक्ति में बुद्धि के रूप में मौजूद है | यह प्रकृति का सूक्ष्म तत्व है जो पुरुष के चैतन्य को दर्पण के समान प्रतिबिम्बित करता है जिससे अचेतन बुद्धि चेतनवत प्रतीत होती है और निर्गुण पुरुष ज्ञाता और भोक्ता जीव के रूप में प्रतीत होता है|

अहंकार- महत या बुद्धि से अहंकार उत्पन्न होता है | यह व्यक्तित्व का तत्व है | बुद्धि का 'मैं' और' मेरा' का अभिमान ही अहंकार है| अहंकार के कारण ही पुरुष अपने को कर्ता, कामी और स्वामी अर्थात वस्तुओं का अधिकारी समझने लगता है| यह अहंकार ही संसार के समस्त व्यवहारों का मूल है |

अहंकार के भेद-

अहंकार तीन प्रकार के होते हैं :

सात्विक- इसमें सत्त्व गुण प्रधान होता है |विश्व रूप में यह मन, पांच ज्ञानेंद्रियों तथा पांच कर्मेंद्रियों को उत्पन्न करता है| व्यष्टि रूप में यह अच्छे कर्म उत्पन्न करता है।

तामस- इसमें तमोगुण प्रधान होता है | विश्व रूप में यह पञ्च तन्मात्राओं को उत्पन्न करता है। व्यष्टि अथवा मनोवैज्ञानिक रूप से यह आलस्य, प्रमाद, तथा उदासीनता उत्पन्न करता है ।

राजस- इसमें रजोगुण की प्रधानता रहती है। विश्व रूप में यह सात्विक और तामसिक गुणों को शक्ति प्रदान करता है| व्यष्टि रूप में यह बुरे या अशुभ कर्मों को उत्पन्न करता है।

मन : यह सात्विक अहंकार से उत्पन्न आंतरिक इंद्रिय है। इसका सहयोग ज्ञान और कर्म के लिए आवश्यक है। इसके अभाव में ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय अपने विषयों को ग्रहण करने में असमर्थ होते हैं| यही अन्य इंद्रियों को उनके विषयों की ओर प्रेरित करता है। यह सूक्ष्म होते हुए भी सावयव है और अनेक इंद्रियों के साथ एक साथ संयुक्त हो सकता है| ज्ञानेंद्रियां तथा कर्मेंद्रियां बाह्यकरण है।मन, बुद्धि और अहंकार अंतःकरण है |

ज्ञानेन्द्रियां तथा कर्मेन्द्रियां :

सात्विक अहंकार से ही पांच ज्ञानेन्द्रिय और पञ्च कर्मेन्द्रिय उत्पन्न होतीं हैं| नेत्र ,श्रवण,घ्राण रसना और त्वचा ये पांच ज्ञानेंद्रियां हैं जिनसे क्रमशः रूप, रस,गंध स्पर्श और शब्द की उपलब्धि होती है| वास्तव में इंद्रियां अप्रत्यक्ष शक्ति हैं जो प्रत्यक्ष अवयवों में रहती हैं और विषयों को ग्रहण करती हैं। अर्थात आंख इंद्रिय नहीं बल्कि देखने की शक्ति है | इस प्रकार इंद्रियां प्रत्यक्ष नहीं बल्कि अनुमान का विषय है |इसी प्रकार पांच कर्मेंद्रियां पांच अप्रत्यक्ष शक्तियां हैं

जो शरीर के इन अंगों में स्थित हैं- मुख , हाथ,, पैर, मलद्वार और जननेंद्रिय । इनसे क्रमशः ये काम होते हैं – वाक अर्थात बोलना, ग्रहण करना, गमन अर्थात जाना,मल निःसारण, और जनन ।

पंचतन्मात्राएँ तथा पंचमहाभूत:

तामस अहंकार से पंचतन्मात्राएं उत्पन्न होती हैं। ये तन्मात्राएं रूप, रस गंध, स्पर्श और शब्द के सूक्ष्म तत्व हैं | ये पंचमहाभूत को अर्थात पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश को उत्पन्न करती हैं और उनके विशिष्ट गुणों को भी उत्पन्न करती हैं।

इस प्रकार सांख्य का विकासवाद प्रकृति एवं चौबीस तत्वों का खेल है | सांख्य का 25 वां तत्व पुरुष है जो प्रकृति से बिल्कुल विपरीत और स्वतंत्र है तथा इस विकासवाद से अलिप्त है | वह इन पचीस तत्वों की कार्य कारण की श्रृंखला से सर्वथा अलग है| वह न किसी का कारण है न किसी का कार्य। प्रकृति केवल कारण है कार्य नहीं है | महत्, अहंकार और पंचतन्मा त्राएं दोनों हैं |पंच ज्ञानेंद्रियां, पंचकर्मेंद्रियां और पंचमहाभूत –ये सोलह तत्व केवल कार्य हैं |

१.**प्रकृति**

|

२.महत

|

३.अहंकार

|

सात्विक _____ राजसिक _____ तामसिक

| |

४.मन ५-९. पञ्च ज्ञानेन्द्रिय १०.-१४. पञ्च कर्मेन्द्रिय १५-१९.पञ्चतन्मात्रा

|

२०-२४.पंचमहाभूत

विकास का प्रयोजन- सांख्य दर्शन विकासवाद वादी है| जिस प्रकार वृक्ष से फल निकलते हैं या बछड़े के पोषण के लिए गो के स्तनों से दूध बहता है , उसी प्रकार प्रत्येक वस्तु चेतन रूप से पुरुष के प्रयोजन को ही पूर्ण करती है चाहे वह भोग हो या मोक्ष । सांख्य का पुरुष जो कारण और कार्य से परे है किन्तु विकास का निमित्त कारण और प्रयोजन कारण दोनों है | उसके प्रकृति के साथ सहयोग के बिना सृष्टि नहीं होती तथा पुरुष के प्रयोजन को सिद्ध करने के लिए सृष्टि होती है। यद्यपि पुरुष निष्क्रिय, तटस्थ तथा निर्गुण है तथा प्रकृति त्रिगुणात्मिका है, किन्तु वह पुरुष के लक्ष्य को सिद्ध करने के लिए ही कार्य करती है । सांख्य प्रकृति को निमित् तथा उपादान कारण मानता है| प्रकृति के तीनों गुण विरुद्ध हुए भी तेल , बत्ती और दीपक की लो के समान सहयोग करते हुए कार्य करते हैं । इस प्रकार संपूर्ण सृष्टि का उद्देश्य पुरुष का मोक्ष है ।

समाप्त

के लिए प्रकृति और पुरुष दोनों का संसर्ग आवश्यक है| प्रकृति और पुरुष विरुद्ध धर्म वाले हैं |प्रकृति और पुरुष के सहयोग को समझाने के लिए सांख्य दर्शनमें अंधे और लंगड़े का उदाहरण दिया गया है| जंगल पार करने के लिए अंधा और लंगड़ा परस्पर सहयोग करते हैं और दोनों अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेते हैं| इसी प्रकार निष्क्रिय पुरुष और अचेतन प्रकृति लक्ष्य की प्राप्ति के लिए परस्पर सहयोग करते हैं। सृष्टि से पूर्व प्रकृति गुणों की साम्यावस्था में रहती है |इसे प्रलय की स्थिति कहा गया है |इस स्थिति में सारी सृष्टि कारण रूप में विद्यमान रहती है तथा सृष्टि की अवस्था में यह कार्य रूप में व्यक्त होती है |इस प्रकार सांख्य दर्शन के अनुसार संपूर्ण सृष्टि प्रकृति के गर्भ में प्रकट होने से पूर्व अव्यक्त रूप में विद्यमान है|पुरुष के संयोग से गुणों की साम्यावस्था भंग होती है तथा सृष्टि की क्रिया प्रारंभ हो जाती है |सृष्टि का विकास सीधी रेखा में नहीं चलता| सृष्टि और प्रलय चक्रवत चलते रहते हैं, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार एक व्यक्ति का जन्म मरण चक्र चलता रहता है| सृष्टि अनादि है|

प्रश्न है कि सृष्टि क्यों और कैसे होती है? सांख्य का कहना है कि प्रकृति अचेतन और अंध है किंतु वह सक्रिय है और द्रष्टा है, जबकि पुरुष चेतन और निष्क्रिय है| पुरुष को प्रकृति की अपेक्षा है| वह भोग करना चाहता है और उसके पश्चात उससे निवृत्त होकर अपने स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करके मोक्ष प्राप्त करता है| इसी प्रकार प्रकृति को पुरुष की अपेक्षा है| प्रकृति चाहती है कि पुरुष उसे देखे , उसका भोग करे, उसके स्वरूप को जाने | इस प्रकार प्रकृति पुरुष के भोग तथा मोक्ष के लिए सृष्टि कार्य में प्रवृत्त होती है|

सृष्टि का विकास :-

सांख्य दर्शन के अनुसार सम्पूर्ण सृष्टि उत्पति एवं विकास के पूर्व एक मूल कारण में विद्यमान रहती है | सृष्टि के पूर्व प्रकृति के सभी गुण साम्यावस्था में रहते हैं |गुणों की सम्मिलित मात्रा न घट सकती है न बढ़ सकती है | यहाँ हमें आधुनिक उर्जा संरक्षण के सिद्धांत का संकेत मिलता

है| उत्पत्ति नयी सृष्टि नहीं है बल्कि अविर्भाव मात्र है| प्रकृति और पुरुष का सानिध्य होने पर गुणों की साम्यावस्था में विकार उत्पन्न होता है| इसे गुण क्षोभ कहा गया है |इस अवस्था में उथल-पुथल मचती है | प्रकृति के तीनों गुण आपस में आपस में मिलते हैं तथा उनके संयोग से सांसारिक विषय उत्पन्न होते हैं|

प्रकृति से सृष्टि के विकास की प्रक्रिया का क्रम इस प्रकार है ;

महत् - सृष्टि के विकास के क्रम में सर्वप्रथम बुद्धि या महत् तत्त्व उत्पन्न होता है| विराट बाह्य जगत इसमें बीज रूप में निहित है | इसलिए इसे महत कहा गया है| व्यष्टि रूप में यह प्रत्येक व्यक्ति में बुद्धि के रूप में मौजूद है | यह प्रकृति का सूक्ष्म तत्व है जो पुरुष के चैतन्य को दर्पण के समान प्रतिबिम्बित करता है जिससे अचेतन बुद्धि चेतनवत प्रतीत होती है और निर्गुण पुरुष ज्ञाता और भोक्ता जीव के रूप में प्रतीत होता है|

अहंकार- महत या बुद्धि से अहंकार उत्पन्न होता है | यह व्यक्तित्व का तत्व है | बुद्धि का 'मैं' और' मेरा' का अभिमान ही अहंकार है| अहंकार के कारण ही पुरुष अपने को कर्ता, कामी और स्वामी अर्थात वस्तुओं का अधिकारी समझने लगता है| यह अहंकार ही संसार के समस्त व्यवहारों का मूल है |

अहंकार के भेद-

अहंकार तीन प्रकार के होते हैं :

सात्विक- इसमें सत्त्व गुण प्रधान होता है |विश्व रूप में यह मन, पांच ज्ञानेंद्रियों तथा पांच कर्मेंद्रियों को उत्पन्न करता है| व्यष्टि रूप में यह अच्छे कर्म उत्पन्न करता है।

तामस- इसमें तमोगुण प्रधान होता है | विश्व रूप में यह पञ्च तन्मात्राओं को उत्पन्न करता है। व्यष्टि अथवा मनोवैज्ञानिक रूप से यह आलस्य, प्रमाद, तथा उदासीनता उत्पन्न करता है ।

राजस- इसमें रजोगुण की प्रधानता रहती है। विश्व रूप में यह सात्विक और तामसिक गुणों को शक्ति प्रदान करता है| व्यष्टि रूप में यह बुरे या अशुभ कर्मों को उत्पन्न करता है।

मन : यह सात्विक अहंकार से उत्पन्न आंतरिक इंद्रिय है। इसका सहयोग ज्ञान और कर्म के लिए आवश्यक है। इसके अभाव में ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय अपने विषयों को ग्रहण करने में असमर्थ होते हैं| यही अन्य इंद्रियों को उनके विषयों की ओर प्रेरित करता है। यह सूक्ष्म होते हुए भी सावयव है और अनेक इंद्रियों के साथ एक साथ संयुक्त हो सकता है| ज्ञानेंद्रियां तथा कर्मेंद्रियां बाह्यकरण है।मन, बुद्धि और अहंकार अंतःकरण है |

ज्ञानेन्द्रियां तथा कर्मेन्द्रियां :

सात्विक अहंकार से ही पांच ज्ञानेन्द्रिय और पञ्च कर्मेन्द्रिय उत्पन्न होतीं हैं| नेत्र ,श्रवण,घ्राण रसना और त्वचा ये पांच ज्ञानेंद्रियां हैं जिनसे क्रमशः रूप, रस,गंध स्पर्श और शब्द की उपलब्धि होती है| वास्तव में इंद्रियां अप्रत्यक्ष शक्ति हैं जो प्रत्यक्ष अवयवों में रहती हैं और विषयों को ग्रहण करती हैं। अर्थात आंख इंद्रिय नहीं बल्कि देखने की शक्ति है | इस प्रकार इंद्रियां प्रत्यक्ष नहीं बल्कि अनुमान का विषय है |इसी प्रकार पांच कर्मेंद्रियां पांच अप्रत्यक्ष शक्तियां हैं जो शरीर के इन अंगों में स्थित हैं- मुख , हाथ,, पैर, मलद्वार और जननेंद्रिय । इनसे क्रमशः ये काम होते हैं – वाक अर्थात बोलना, ग्रहण करना, गमन अर्थात जाना,मल निःसारण, और जनन ।

पंचतन्मात्राएँ तथा पंचमहाभूत:

तामस अहंकार से पंचतन्मात्राएं उत्पन्न होती हैं। ये तन्मात्राएं रूप, रस गंध, स्पर्श और शब्द के सूक्ष्म तत्व हैं | ये पंचमहाभूत को अर्थात पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश को उत्पन्न करती हैं और उनके विशिष्ट गुणों को भी उत्पन्न करती हैं।

इस प्रकार सांख्य का विकासवाद प्रकृति एवं चौबीस तत्वों का खेल है | सांख्य का 25 वां तत्व पुरुष है जो प्रकृति से बिल्कुल विपरीत और स्वतंत्र है तथा इस विकासवाद से अलिप्त है | वह इन पचीस तत्वों की कार्य कारण की श्रृंखला से सर्वथा अलग है| वह न किसी का कारण है न किसी का कार्य। प्रकृति केवल कारण है कार्य नहीं है | महत्, अहंकार और पंचतन्मा त्राएं दोनों हैं |पंच ज्ञानेंद्रियां, पंचकर्मेंद्रियां और पंचमहाभूत –ये सोलह तत्व केवल कार्य हैं |

१.**प्रकृति**

|

२.महत

|

३.अहंकार

|

सात्विक _____ राजसिक _____ तामसिक

|

४.मन ५-९. पञ्च ज्ञानेन्द्रिय १०.-१४. पञ्च कर्मेन्द्रिय

|

१५-१९.पञ्चतन्मात्रा

|

२०-२४.पंचमहाभूत

विकास का प्रयोजन- सांख्य दर्शन विकासवाद वादी है| जिस प्रकार वृक्ष से फल निकलते हैं या बछड़े के पोषण के लिए गो के स्तनों से दूध बहता है , उसी प्रकार प्रत्येक वस्तु चेतन रूप से पुरुष के प्रयोजन को ही पूर्ण करती है चाहे वह भोग हो या मोक्ष । सांख्य का पुरुष जो कारण और कार्य से परे है किन्तु विकास का निमित्त कारण और प्रयोजन कारण दोनों है | उसके प्रकृति के साथ सहयोग के बिना सृष्टि नहीं होती तथा पुरुष के प्रयोजन को सिद्ध करने के लिए सृष्टि होती है। यद्यपि पुरुष निष्क्रिय, तटस्थ तथा निर्गुण है तथा प्रकृति त्रिगुणात्मिका है, किन्तु वह पुरुष के लक्ष्य को सिद्ध करने के लिए ही कार्य करती है । सांख्य प्रकृति को निमित् तथा उपादान कारण मानता है| प्रकृति के तीनों गुण विरुद्ध हुए भी तेल , बत्ती और दीपक की लो के समान सहयोग करते हुए कार्य करते हैं । इस प्रकार संपूर्ण सृष्टि का उद्देश्य पुरुष का मोक्ष है ।

समाप्त